Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
July to September 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LI (51), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

लोक संस्कृति का बदलता स्वरूप

अक्षय कुमार* डॉ. मनीषा सिंह मरकाम**

*** शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत**
**** सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस, श्री अटल बिहारी वाजपेयी, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत**

शोध सारांश – लोक संस्कृति मनुष्य को श्रेष्ठता की ओर ले जाती है। किसी भी संस्कृति का मूल उद्देश्य मनुष्य में अच्छे गुणों का विकास करना है। मनुष्य जन्म से संस्कृति के मूल सिद्धांतों को ग्रहण करता है और धीरे-धीरे मनुष्य के प्रत्येक क्रियाकलापों पर संस्कृति का प्रभाव पड़ता है। यह कहना बिल्कुल भी अनुचित नहीं होगा कि संस्कृति के जरिये ही मनुष्य, मनुष्य बनता है। लोक और संस्कृति को विखंडित करके नहीं देखा जा सकता है। जब मनुष्य को अपनी संस्कृति पर गर्व होता है तो उसमें अपनी संस्कृति की रक्षा की प्रबल भावना जाग्रत हो जाती है। संस्कृति न केवल मनुष्य को पहचान देती है बल्कि देश को भी पहचान देती है। लोक संस्कृति का केन्द्रीय विषय मनुष्य ही है। मनुष्य के द्वारा अलग-अलग समय में विशेष पृष्ठभूमि को आधार बनाकर जो रचनाएँ की गई हैं वे सभी रचनाएँ लोक संस्कृति की धरोहर है। मनुष्य की उपलब्धियाँ लोक से बाहर नहीं होती।
कुंजी शब्द – लोक संस्कृति, विखंडित, केन्द्रीय, पृष्ठभूमि।

प्रस्तावना – लोक शब्द का शाब्दिक अर्थ है 'देखना' या 'देखने वाला'

वेद व्यास के अनुसार – 'प्रत्यक्षदर्शी लोकानां सर्वदर्शी भवेन्नरः' अर्थात् जो लोक को स्वयं अपनी आँखों से देखता है, वही व्यक्ति लोक को समझ सकता है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार – 'लोक शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम नहीं है बल्कि नगरों और गाँवों में फैली हुई वह समूची जनता है, जिसके व्यवहारिक ज्ञान के आधार पर पोथियाँ नहीं हैं।'

लोक में न केवल भूतकाल में घटी हुई घटनाओं का विवरण होता है बल्कि वर्तमान और भविष्य का भी समायोजन होता है। लोक शब्द अत्यन्त प्राचीन है। वेदों, पुराणों, ब्राह्मण ग्रंथों, बौद्ध धर्म के ग्रंथों में भी 'लोक' शब्द प्रयुक्त हुआ है।

डॉ. वासुदेवषरण अग्रवाल के अनुसार – 'लोक हमारे जीवन का महासमुद्र है, उसमें भूत, भविष्य और वर्तमान सभी कुछ संचित रहता है। लोक ही राष्ट्र का अमर स्वर है।' लोक संस्कृति के बिना सभी अधूरे हैं और जो ज्ञान लोक हित के काम न आए ऐसा ज्ञान अधूरा है। लोक के केन्द्र में मनुष्य है। स्त्री-पुरूष लोक रूपी रथ के दो पहिए हैं। दोनों से मिलकर लोक का निर्माण हुआ है। मनुष्य पृथ्वी पुत्र है इसलिए कहा जाता है, 'माता भूमि': पुत्रोहंऽपृथिव्याः।

जब तक मनुष्य का अस्तित्व रहेगा तब तक लोक संस्कृति रहेगी। लोक संस्कृति मनुष्य के विश्वासों, रीतियों, रिवाजों, रूढ़ियों, व्यवहारों एवं परम्पराओं से बनती है।

लोक संस्कृति का बदलता स्वरूप वर्तमान में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। किसी स्थान विशेष की संस्कृति वहाँ की लोक संस्कृति जनजीवन से परिलक्षित होती है, क्योंकि लोक संस्कृति मानव जीवन का दर्पण है, जिसमें जनता की भावनाओं की सुख-दुःख भरी अनेकों प्रवृत्तियाँ दिखाई देती है। वर्तमान में नई पीढ़ी के नव युवक-युवतियों में फिल्मी दुनिया की नयी-नयी वेशभूषा और हेयर स्टाइल देखकर फिल्मों के अभिनेता, नायक-नायिका की तरह ही कपड़े पहनने और बाल रखने की होड़ देखी जा सकती है। उन्हीं की तरह कपड़े पहनना, उन्हीं की तरह चश्मा लगाना, फिल्मों में दिखाई जाने वाली बाईक, कार एवं अन्य संसाधन जैसे मोबाईल आदि लांच होने के तुरन्त बाद ही खरीद लेने का मानो फैशन बन गया है। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि बाह्य अनुकरण अपनाने का जैसे फैशन सा हो गया है। आन्तरिक अनुकरण को अपनाने की आवश्यकता है। आवश्यकता है आज संतों, महात्माओं, अच्छे नेताओं और अच्छी पुस्तकों का अनुकरण करने की जिनसे आज की युवा पीढ़ी दूर होते जा रही है। राम, कृष्ण, गौतमबुद्ध, महावीर स्वामी, ईसा मसीह, हजरत मोहम्मद, गुरू नानक, महात्मा गांधी ऐसे ही व्यक्ति या विचारक हैं, जिन्होंने अपने समय की रूढ़ी परम्पराओं को बदलकर नई चेतना और नयी विचारधारा को समाज के सामने रखा।

किसी रीति-रिवाज को ज्यों का त्यों पालन करना परम्परा का निर्वाह करना है, किन्तु इस परम्परा में किंचित परिवर्तन के साथ अपनाने में कुछ अनुचित भी नहीं है क्योंकि समय और परिस्थितियों के साथ बदलाव आवष्यक हो जाता है। आजकल ग्रामीण और जनजातीय जीवन पद्धति में परिवर्तन हो रहा है अब ग्रामीण जन सामान्य हृदय के साथ-साथ बुद्धि को भी महत्व दे रहा है इसका अर्थ यह बिल्कुल भी नहीं है कि वहाँ की लोक संस्कृति नष्ट हो रही है।

आजकल लोक-कलाओं का उपयोग व्यवसायिक दृष्टि से या नाम कमाने की दृष्टि से हो रहा है क्योंकि वैश्वीकरण के इस युग में पूँजीवादी संस्कृति ने व्यक्ति को उपभोक्तावादी बना दिया है। यदि परम्परा में परिवर्तन के बावजूद कला की गुणवत्ता में कोई कमी नहीं आये तो लोक संस्कृति की परम्परा प्रभावित नहीं होती।

पश्चिमी सभ्यता का अनुकरण बुरा नहीं है, बुरा है उसका अन्धानुकरण अपनी मिट्टी, अपनी परम्परा के लोक को सुरक्षित रखते हुए यदि हम उसके सारतत्व को ग्रहण करें तो लोक संस्कृति के प्रति हमारी संवेदनाएँ भी सुरक्षित रहेंगी। पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव से हमारी संस्कृति में बदलाव देखा जा सकता है। अब लोग पाश्चात्य संगीत, नृत्य और पहनावे को अपनाने पर जोर दे रहे हैं।

हमें हमारी सांस्कृतिक धरोहर की रक्षा करना अति आवश्यक है। हमारी पुरातन संस्कृति, हमारे देश की पहचान है। पश्चिमी सभ्यता के अंधानुकरण से हमारी मातृभाषा, बोली, संस्कृति एकरूपता और पारम्परिक कला और शिल्प पर विपरित प्रभाव पड़ सकता है।

लोक संस्कृति का स्वरूप समय के साथ-साथ बदल रहा है और यह बदलाव आज भी जारी है। पहले हमारी संस्कृति में पारम्परिक मूल्य और आदर्शों को महत्व दिया जाता था, लेकिन अब इसमें बदलाव आ रहा है। पहले हमारी संस्कृति में प्रकृति को महत्व दिया जाता था परन्तु अब आधुनिकता के नाम पर प्रकृति का दोहन हो रहा है। इससे पर्यावरण प्रदूषण और अन्य समस्याएँ लगातार बढ़ रही है। पंजाब, हरियाणा, उत्तराखंड, हिमाचलप्रदेश और दिल्ली में आई बाढ़ इसके उदाहरण हैं। उत्तराखण्ड के उत्तरकाशी जिले के धराली गाँव जहाँ भूस्खलन हुआ वहाँ कल्प केदार का मंदिर था जिसके बारे में कहा जाता है कि कई वर्षों पूर्व यह मन्दिर मलबे में ही दबा हुआ मिला था जो बादल फटने के बाद आये सैलाब में पुन: गुम हो गया।

आजकल के युवक-युवतियाँ अपने अंगों पर टैटू बनवाते हैं जो पुरानी गोदना परम्परा का ही एक रूप है। क्लबों और पार्टियों में आज आधुनिक जोडे मुखौटा लगाकर एक-दूसरे के साथ नाचते दिखाई पड़ते हैं जो पहले कई जनजातियों में सामूहिक नृत्य में उपयोग में लाया जाता था। पहले बच्चों को जुकाम होने पर गले में लहसुन पहनाया जाता था, नजर न लगे इसलिए काला टीका लगाया जाता था और लड़कियों का आज भी पैर में काला धागा बाँधना इसके लिये उदाहरण है कि प्राचीन समय में ऐसे किये जाने वाले कार्य वर्तमान में भी प्रासंगिक बने हुए हैं।

वास्तविकता यह है कि विज्ञान के इस युग में भी पढ़े-लिखे लोग पूजन कार्य में या संस्थाओं के उद्घाटन में नारियल फोड़ते हैं, शंख फूंकते हैं, घण्टी बजाते हैं। आज के पढ़े-लिखे लोग नई बहु के आगमन पर गृह प्रवेश की रस्म अदा करते हैं। सच यही है कि जीवनशैली आधुनिक पहवाना, साज-सज्जा और आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की सूचना सभी को प्राचीन लोक संस्कृति से ही मिली है। परिवर्तन या विकास से लोक संस्कृति को मिटाया नहीं जा सकता और मानव को भी अपनी लोक संस्कृति के प्रति सजग रहने की आवश्यकता है। आजकल नाना-नानी की कहानियाँ, दादा-दादी की कहानियाँ शहरी और महानगरीकरण की चकाचौंध में कहीं गुम सी होती जा रही है। आज के बच्चे कम्प्यूटर और मोबाइल के इस युग में बचपन के खेल जैसे - गुल्ली-डण्डा, कंचे खेलना, लंगड़ी खेलना आदि खेल तो भूलते ही जा रहे हैं। साथ-साथ शारीरिक व्यायाम के खेल जैसे - फुटबॉल, वालीवॉल, बास्केटबॉल, क्रिकेट और हॉकी जैसे खेल भी खेलना कम कर चुके हैं जो बच्चों के स्वास्थ्य के लिए बिल्कुल भी ठीक नहीं है।

आज विकास के नाम पर हम हमारी लोक संस्कृति से दूर होते जा रहे हैं। जंगलों का कटाव, शहरीकरण, औद्योगिकीकरण और अत्यधिक संसाधनों के दोहन के कारण हो रहे प्रदूषण से मानवीय जीवन आज खतरे में है। समय पर वर्षा का न होना, जलवायु परिवर्तन के कारण आज हम विनाश की कगार पर हैं। विकास की आड़ में प्रकृति के दोहन को रोकना होगा। संस्कृति को बचाना है तो पर्यावरण को बचाना होगा तभी हम अपनी परम्परा को सुरक्षित रख पायेंगे और अपनी लोक संस्कृति को संरक्षित कर सकेंगे। यह लोक संस्कृति ही है जो हमारी जड़ होती हुई संवेदनाओं को जगाकर हमें बेहतर इंसान बनाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. लोक संस्कृति, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, वसंत निरगुणे, सातवां संस्करण, 2022
2. साहित्य में जनजातीय जीवन दर्शन, संपादक डॉ. योग्यता भार्गव, संस्करण प्रथम, 2022
3. मानव और संस्कृति - प्रगति प्रकाशन, ब्रोमलेय युलिआन।
4. डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल - लोक संस्कृति, सम्मेलन पत्रिका

****